International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 5.414 Volume 5, Issue 4, April 2018
Website-www.aarf.asia,**Email**:editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

भारत में छात्र राजनीति विषय की अद्यतन स्थिति

खुशबू कुमारी, अतिथि व्याख्याता,
राजनीति शास्त्र विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची।

भारत में छात्र राजनीति विश्वविद्यालय शिक्षण व्यवस्था का अहम घटक रही है। चाहे वो जे.एन.यू. हो, डीयू हो, ए.एम.यू. हो या फिर लखनऊ, इलाहाबाद या बनारस हिंदू विश्वविद्यालय।

शिक्षा के इन महत्वपूर्ण केन्द्रों में आजादी के बाद से छात्र राजनीति ने न केवल छात्रों की समस्याओं को केन्द्र में रखकर अपनी–अपनी गतिशीलता बनाए रखी है बल्कि छात्र राजनीति के वृहत्त फलक पर भी अपनी सक्रिय भागीदारी निभाई है।

हालांकि बी.एच.यू. के संस्थापक मदन मोहन मालवीय ने छात्र और राजनीति नायक लेख में लिखा था कि जब तक छात्रों को राजनीति से दूरी रखनी चाहिए और अपना सारा ध्यान पढ़ाई पर केन्द्रित करना चाहिए ताकि वो एक बुद्धिजीवी नागरिक बन सकें और देश की उन्नति में बेहतर योगदान दे सकें।

उपकल्पना

1. छात्र समस्याओं के प्रति सत्ता की उपेक्षा का परिणाम छात्र आंदोलन होता है।
2. छात्र आंदोलनों में छात्र नेताओं का योगदान महत्वपूर्ण होता है।

शोध प्रारूप तथा शोध पद्धति

अध्ययन को सार्थक बनाने के लिए अन्वेषणात्मक प्रारूप का अध्ययन किया गया है एवं शोध पद्धति में ऐतिहासिक एवं वर्णनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

उपकरण

प्रयुक्त शोध सामग्री के रूप में आकड़े द्वितीयन स्रोत के रूप में पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं और लेखों इत्यादि का अध्ययन किया जाएगा।

© Associated Asia Research Foundation (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

आजादी के बाद :– लेकिन भारत के आजादी के बाद कॉलेजों, विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले और आदर्श से भरे छात्रों ने मालवीय जी की इस राय से शायद ही कभी इत्तेफाक रखा और लगातार विश्वविद्यालय की राजनीति सक्रिय राजनीति की पाठशाला के रूप में ही विकसित होते रही।

इसके कारण भी थे। आजादी पाने के बाद देश के युवाओं में रोजगार खुशहाली के जो सपने जगे थे वो जल्दी ही चकनाचूर हो गए और इसकी सबसे पहली भार विश्वविद्यालयों में शिक्षा ले रहे छात्रों पर ही पड़ी।

ये वो युवा थे जो शिक्षित थे। रोजगार के काबिल थे, देश के विकास में अध्य भूमिका निभाने को तैयार बैठे थे। लेकिन एक पिछड़े देश के पास इतनी सहूलियतें नहीं थी कि वो सभी शिक्षित युवाओं को रोजगार के अवसर दे पाता। छात्र एक दो दोराहे पर खड़ा था। या तो वो अपने टूटे सपनों के साथ जिना सीख लेता या फिर व्यवस्था के खिलाफ आंदोलन करता।

ऐसे ही छात्रों की उम्मीदों की रोशनी बने थे लोकनायक जयप्रकाश नारायण जिनके व्यवस्था विरोधी आंदोलन ने हजारों की संख्या में छात्रों को प्रेरित किया था और देखते ही देखते लालू, नीतीश, सुशील, मोदी, रविशंकर प्रसाद यादव, अरूण जेटली, शरद यादव, विजय गोयल जैसे छात्र नेताओं की एक पूरी पीढ़ी तैयार हो गई थी।

जेपी आंदोलन :– कह सकते हैं कि देश और समाज में व्याप्त अव्यवस्थाओं ने ही इन छात्रों को प्रेरित किया था और जब इंदिरा गांधी ने जयप्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रांति आंदोलन के जवाब में इमरजेंसी घोषित कर दी तो अपना घर–बार छोड़ आंदोलन करने वाले सैकड़ों छात्र नेता सलाखों के पीछे पहुँचा दिए गए थे। रिहाई के बाद कार्यक्रम में इनमें से कई छात्र नेता बड़े राजनेता के रूप में उभरे। जेपी से पहले गुजरात में छात्रों की अगुवाई में नवनिर्माण आंदोलन ने कथित रूप से भ्रष्ट गुजरात सरकार को इस्तीफा देने पर मजबूर कर दिया। लेकिन पिछले बीच–पच्चीस वर्षों में छात्र राजनीति में एक गिरावट का रूख देने को मिल रहा है। हालांकि इसमें एक जबर्दस्त उबाल तब आया जब 90 के दसक की शुरूआत में मंडल कमीशन की सिफारिशों के आधार पर आरक्षण की नीति लागू हुई थी।

बी.एच.यू. और जे.एच.यू. छात्र संग के अध्यक्ष रहे और प्रसिद्ध समाजशास्त्री अनंद कुमार इसे याद करते हुए कहते हैं कि ये वो दौर था जब स्मिता की राजनीति ने अस्तित्व और साझेदारी के सवालों को पीछे छोड़ दिया था। ये दौर मंडलीकरण का था। मंदिर मस्जिद कथा और भूमंडलीकरण का था। बी.ए.यू. के पूर्व छात्र संघ अध्यक्ष आनंद प्रधान कहते हैं कि ये उबाल दरअसल छात्र राजनीति को कमजोर करने वाला साबित हुआ क्योंकि अपनी एकता के लिए जानी जाने वाली छात्र राजनीति में जाति, धर्म और क्षेत्रिय पहचान प्रमुख हो गए। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में मध्य पूर्व में हुई जैस्मिन क्रांति में छात्रों की भूमिका अन्ना के भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन में छात्रों की भूमिका तेलंगाना आंदोलन में ओस्मानिया विश्वविद्यालय में छात्रों की भूमिका में हम देख चुके हैं कि छात्र एकता और आंदोलन ने किस तरह सत्ता की चुनौती दी है।

छात्र नेता ही बने विरोधी :–

आनंद प्रधान कहते हैं ''लालू प्रसाद हो या नीतीश कुमार हो ये लोग जिस छात्र राजनीति से निकलने उसे ही इन्होंने हाशिए पर धकेलने का काम किया। लालू प्रसाद 15 साल बिहार की सत्ता पर रहे लेकिन उस दौरान उन्होंने छात्र संघ चुनाव नहीं कराया। उन्हें ये डर लगता था कि अगर छात्र संघ चुनाव हुए तो नए नेता निकलेंगे जो उन्हें चुनौती दे सकते हैं। बी.ए.यू. 80 के दशक के बाद छात्र राजनीति को कमजोर करने वाली एक और वजह रही विश्वविद्यालय परिसरों में होने वाले हंगामों हड़तालों और आंदोलनों को कानून और व्यवस्था का मामला बनाकर कैंपस में पुलिस की तैनारी कर दी गई। आनंद प्रधान इसे सत्ता की साजिश के रूप में देखते हैं, छात्र संघों की सत्ता विरोध के केन्द्र के रूप में देखे जाने की वजह से पहले उन्हें भ्रष्ट बनाया उन्हें पैसे खिलाए, उसमें ठेकेदारों और अपराधियों को घुसने दिया। दूसरे चरण में उनको बदनाम करना शुरू किया और जब वो बदनाम हो गए और फिर उन्हें दूध की मक्खी की तरह निकाल कर फेंक दिया गया जिसका विद्यार्थियों ने भी विरोध नहीं किया। जो तर्क दिया जाता है कि छात्र संघ के न रहने से शिक्षा की स्थिति में सुधार होता है उसका जवाब यही है कि बिहार में 1987 से छात्र संघ चुनाव नहीं हुए तो क्या वहां शिक्षा की स्थिति सुधर गई बल्कि वो और बदत्तर हुई है।

जेपी संगठन :– छात्र राजनीति में गिरावट आने की दूसरी वजह ये थी कि वो अपनी–अपनी राजनीतिक पार्टियों के जेपी संगठन बन गए थे। जब राजनीतिक दलों में गिरावट आई तो उसका प्रभाव छात्र राजनीति पर भी दिखाई दिया। प्रोफेसर आनंद कुमार कहते हैं पिछले बीस वर्षों में आया है कि छात्र राजनीति का अपने–अपने दलों के लिए तो रूझान है लेकिन विद्यार्थियों के सहज सवालों के लिए आज कोई विद्यार्थी मंच उपलब्ध नहीं है अपनी–अपनी राजनीतिक सीमाओं के कारण और यही वजह है कि आज आइसा, एसएफआई समाजवादी छात्र संघ, एन.एस.यू.आई. एबीवीपी जैसे छात्र संगठन तो है लेकिन जब विद्यार्थी से पूछा जाता है तो वो यही कहते हैं ये हमारे कर्म हैं और अपने दलों के ज्यादा है।

दूसरी बात ये कि आइसा, एस.एफ.आई. जैसे वामपंथी संगठन जो जेएनयू जैसे कैंपसों में काफी मजबूत नजर आते हैं वो कैंपस के बाहर वैसे प्रभावी नजर नहीं आते इसकी वजह बताते हुए जे.एन.यू. की पूर्व छात्र संघ अध्यक्ष अलबीना शकील कहते हैं – ''जहाँ–जहाँ विश्वविद्यालय परिसरों में विचारधारा की लड़ाई होती है वहाँ वामपंथी को बेहतर प्रदर्शन हमेशा रहा है, लेकिन यूनिवर्सिटी से निकलकर आम जनता के बीच काम करना मेरे ख्याल से पूरे देश में कुछ पॉकेट्स को छोड़कर वामपंथी राजनीति की चुनौती रही है। चुनाव के नतीजे तो यही बताते हैं।''

छात्रों को राजनीति में हिस्सा लेना चाहिए या नहीं, यह सवाल आजादी के पहले भी था। एकजुटता दिखाने के लिए छात्र महात्मा गांधी या किसी राष्ट्रीय नेता की अपील होने पर क्लास छोड़ देते थे। ब्रिटिश शासकों के खिलाफ आंदोलन था और छात्रों को कभी नहीं लगा कि वे अपनी पढ़ाई का नुकसान कर रहे हैं। उस समय भी जब पाकिस्तान के संस्थापक मोहम्मद अली जिन्ना ने मुस्लिम संप्रदाय के लिए अलग

वतन का नारा दिया तो छात्रों ने धर्म के खिंचाव का विरोध किया था। आज अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद (ए.बी.वी.पी.) देश के विश्वविद्यालयों में नरम हिंदुत्व की वकालत कर रही है। हिन्दुत्व के इस समुद्र में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय (जे.एन.यू.) शायद एक द्वीप की तरह है फिर इस विश्वविद्यालय और इसके छात्रों को इसका पूरा श्रेय जाता है कि उन्होंने भारत की सोच लोकतंत्र, विविधता और बराबरी को कमोवेश सुरक्षित रखा है। दुर्भाग्य से सेक्युलरिज्म को बनाए रखने का संघर्ष अभी भी जाती है कुछ समय पहले कुछ मुस्लिम कट्टरपंथी छात्रों जिनकी संख्या पाँच–छह से ज्यादा नहीं रही होगी वे जेएनयू की उदार छवि को नुकसान पहुँचाया और भारत की बर्बादी के नारे लगाए। जेएनयू के कुलपति डॉ0 जगदीश कुमार ने बताया कि इन छात्रों की संख्या मुट्ठी भर से ज्यादा नहीं थी। लेकिन उन्होंने विश्वविद्यालय की छवि खराब कर दी।

हरदम अपनी टीआरपी बढ़ाने की कोशिश में लगे रहने वाले इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने यह धारणा फैला दी कि जेएनयू ऐसी जगह है जहाँ कट्टरपंथी और अलगाववादी पैदा होते हैं। यह संदेह था कि एक टीवी चैनल ने जिस वीडिया को भी चलाया वह फर्जी था। भारतीय संसद पर हमला करने की साजिश रचने वाले अफजल गुरू को श्रद्धांजलि देने की अलगाववादियों की गुस्ताखी को खारिज नहीं करता यह निंदनीय है। लेकिन सवाल यह है कि क्या उन्हें राष्ट्र का एजेंडा तय करने दिया जाए जब भारत की आबादी लोकतंत्र और विविधता को जबर्दस्त रूप से स्वीकार करने लगी है। जेएनयू की घटना को यह मौका नहीं देना चाहिए कि वह धर्म के आधार पर देश का बंटवारा होने के बाद देश की अनेकता बनाए रखने के लिए की गई कठिन मेहनत को कमजोर करे। जेएनयू लंदन के ऑक्सफोर्ड या अमेरिका के हार्वर्ड की तरह है। एक उदार माहौल है और निराले विचारों (जो सामान्य चिंतन के खिलाफ हो) को और राजनीतिक प्रक्रिया में शामिल होना यह भी कि जिस दल को दोर किया उस दल की नीतियों व कार्यक्रमों का समर्थन करने की मंशा पर सवाल नहीं उठाता, क्योंकि मूल बातों पर शक नहीं किया जाता है।

छात्र राजनीति का आशय :

छात्र राजनीति न करें केवल अपनी पढ़ाई करें ऐसा पहली बार नहीं कहा जा रहा है। आजादी के बाद से ही ऐसा कहा जाने लगा कि छात्र केवल पढ़ाई पर ध्यान दें, राजनीति न करें और उन दिनों भी ऐसा कहने वालों को जवाब दिया जाता रहा। मजेदार बात यह रही कि जो राजनीतिक दल सत्ता में होते हैं वे छात्रों को राजनीति से दूर रहने का उपदेश देते हैं। उपदेश क्या एक तरह से निर्देश सा देते हैं। उनकी भाषा की ध्वनि आदेशात्मक होती है जो दल विपक्ष में होते हैं वे अपनी राजनीति के लिए छात्रों का अवसर के अनुसार भरपूर उपयोग करते हैं। विपक्ष में रहने पर छात्र हित वे भूल जाते हैं और छात्रों को राजनीति में सक्रिय रहने का उपदेश देते हैं। आज तक यही हो रहा है। वोट देने की उम्र 18 वर्ष कर दी गई मतलब यह माना गया कि 18 वर्ष का युवा राजनीति की समझ रखता है। वोट देने का मतलब ही है राजनीति में और राजनीतिक प्रक्रिया में शामिल होना यह भी कि जिस दल को वोट किया गया उस दल

की नीतियों व कार्यक्रमों का समर्थन करना। नीतियों को बिना समझे समर्थन तो नहीं किया जा सकता वोट तो 18 साल में देने का अधिकार है लेकिन राजनीति में नहीं आना यह भी कहा जा सकता है। ऐसा कैसे हो सकता है यह तो गुड़ खाये गुलगुले से परहेज करें की बात हुई। सही तो यह है कि जिसे वोट का अधिकार है उसे राजनीतिक में खुलकर आने का भी अधिकार है। पढ़ाई–लिखाई में ही ध्यान दो यह उपदेश सामंती विचार से पैदा हुआ विचार है क्योंकि उन दिनों आमजन को राजनीति से दूर ही रखा जाता रहा। राजा ही सब राजनीति करता। राजनीति का अधिकार राजा के लिए सुरक्षित था। लोकतंत्र में ऐसा नहीं है। छात्र राजनीति में भाग न लें कहना भी एक तरह की राजनीति है और यह खतरनाक राजनीति है। छात्र राजनीति में भाग न लें कहने वाले वास्तव में पढ़े लिखे युवा के लोकतांत्रिक व्यवस्था में प्रवेश को रोकना चाहते हैं। राजनीति को लूट का हथियार बना लेने वाले नहीं चाहते कि छात्र राजनीति में आकर उनके अधिकार को खत्म करें। वे निर्बाध मनमानी का अधिकार खोना नहीं चाहते इसलिए राजनीति की बात जब छात्र उठाते हैं और स्वच्छ राजनीति के लिए सक्रिय हो उठते हैं तब लोकतंत्र में सत्ता को लूट का सरगना बनाने वाले घबरा जाते हैं। उन्हें अपना 'लूट कर्म' पर संकट दिखाई पड़ने लगता है। एक तो यह कि जो एक बात सत्ता पर काबिज हो जाता है जिसके हाथ में व्यवस्था की नकेल आ जाती है वह अपनी सत्ता का भागीदार किसी को बनने नहीं देता। वह यह भी नहीं चाहता कि उसे कोई चैलेंज करें। युवा जब साफ–सुथरी राजनीति लेकर आते हैं तब सत्ता सुख की बजाये मठाधीश घबरा जाते हैं और अपने पद का रौब गांठते हुए छात्रों पर उपदेश की बौछार शुरू कर देते हैं। हमारे यहाँ होता यह रहा है कि जो भी उपक्रम व्यक्ति के विकास में सहायक होता है छात्र वर्ग को उससे दूर ही रखा जाए, यह अजीब सोच रही है। निश्चित ही यह सामंती सोच है जो हमारे इस उद्यत सामंती लोकतंत्र में घुस आयी है। इसलिए आजादी के इतने वर्ष बाद हमारे देश की खेल स्थिति की क्या दशा है यह सामने है। जब देश में अंग्रेजी पढ़ाई का रिवाज चल पड़ा तो माताएँ अपने बच्चों के लिए कहती मेरी बेटी कलेक्टर, बेरिस्टर बनेगा। शायद ही कोई यह कहती हो कि मेरा बेटा खिलाड़ी बनेगा। बहरहाल नमक का दारोगा कहानी में मुंशी प्रेमचन्द्र ने भारतीय मध्य वर्ग सोच को बेहतर उजागर किया है। हमारे यहाँ कहावतें तो अति आकर्षक कही जाती हैं। युवा ही क्रांति का वाहक है, लेकिन यह नहीं बताया जाता कि युवा को क्रांति की समझ कहाँ से मिलती है और किस तरह विकसित होती है। कॉलेज यूनिवर्सिटी में ही छात्र के विचार रूप ग्रहण करते हैं और परिपक्व भी होते हैं। इस उम्र में उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक विचार करने सोचने से बाधित करना उनकी ऊर्जा पर पानी डालना है। अविचारित लड़ाई तो अव्यवस्था ही लाती है। बहरहाल आज पुनः इसकी चर्चा छेड़ दी गई है कि छात्र राजनीति न करें। आज से 40–50 वर्ष पूर्व स्कूलों–कॉलेजों में इस पर वाद विवाद प्रतियोगिताएँ होती रही है। लेकिन कई वर्षों से इस पर चर्चा बंद रही। अब पुनः इसे उठाया गया है और सत्ता को अपनी बांहों में कसकर बांधे बैठे लोग छात्रों के राजनीति में आने को लेकर भौवे तान रहे हैं। राजनीति पर कब्जा जमाए लोगों की माने तो शिक्षक राजनीति में न आएँ, साहित्यकार, कलाकार राजनीति

न करें किसान, मजदूर, व्यापारी, कर्मचारी भी राजनीति न करें। तो राजनीति कौन करें? इन सबके लिए राजनीति प्रतिबंधित कर दी गई है तो किस वर्ग के लिए खुली रखी जा रही है? राजनीति में ये–ये–ये न आएँ तो पूछा जाना चाहिए कि राजनीति का क्षेत्र किनके लिए है? वास्तव में देखा, समझा जाए तो राजनीति और राजनीतिक व्यवस्था की परिधि के अंदर के लोग किसी भी तरह के प्रतिरोध से कांप उठते हैं। छात्रों के सक्रिय राजनीति में आने की सुगबुगाहट से उनका इंद्रासन डोलने लगती है। उन्हें अपनी कुर्सी की चिंता सताने लगती है इसलिए वे छात्रों को राजनीति से दूर ही रहने का उपदेश देते रहते हैं, जबकि छात्र सत्ता के लिए राजनीति में नहीं आते या वे सत्ता की राजनीति नहीं करते वरन् व्यवस्था में परिवर्तन की बात करते हैं। हर राजनीतिक दल अपने हित में छात्र राजनीति चाहता है, छात्र राजनीति करें हमारे दल के लिए। इस अर्थ में जो दल छात्रों को राजनीति से दूर रहने कहता है वह अपने मतलब की पूर्ति में उनका डटकर उपयोग करता है। मतलब से ही छात्र राजनीति चाहिए। हमारे यहाँ ही नहीं, पूरी दूनिया में छात्र आंदोलन का लंबा गौरवशाली इतिहास है। अपने यहाँ 1942 में युवकों–छात्रों ने जो भूमिका निभाई वह यादगार है। उससे 22 वर्ष पूर्व 1920 में महात्मा गाँधी ने छात्रों से सरकारी स्कूल छोड़ने की अपील की लाखों छात्रों ने सरकारी स्कूल छोड़ा और उसी काल में देश भर में नेशनल स्कूल या राष्ट्रीय विद्यालय की स्थापना जागरूक नागरिकों ने की। 1974–75 का छात्र आंदोलन तो ताजा ही माना जाएगा। इसमें छात्रों ने बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया और सरकार को जनविरोधी नीतियों का मजा चखाया। छात्र आंदोलन जो विचारों से उपजें हो समाज को शिक्षित भी करते हैं और एक जनतांत्रिक समाज निर्माण में सहायक भी होते हैं। अपनी माँगों के लिए आंदोलन करने छात्र आंदोलन होते रहते हैं लेकिन व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन या कहें इंकलाब के लिए किए जाने वाले छात्र आंदोलन पूरी व्यवस्था में जबरदस्त परिवर्तन लाते हैं। पढ़ाई तो कैरियर के लिए जरूरी है लेकिन व्यवस्था परिवर्तन के लिए कुछ समय के लिए अपना कैरियर स्थगित रखना व्यापक उद्देश्य के लिए आवश्यक भी होता हे। छात्र ही बड़ा त्याग कर समाज में व्यवस्था तथा राजनीति में परिवर्तन लाने में सक्षम है। छात्रों को राजनीति न करने का उपदेश व्यवस्था की यथास्थिति की पक्षधरता है और ऐसे लोग यथास्थितिवादी होते हैं।

निष्कर्ष :–

भारतीय समाज में छात्र राजनीति आवश्यक है, क्योंकि छात्र हरेक वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। इसलिए समाज का असल चेहरा छात्र राजनीति के माध्यम से देखी जा सकती है। विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले छात्रों की समस्याओं को दूर करने हेतु छात्र राजनीति आवश्यक है।

संदर्भ :–

1. आदेश द्विवेदी अगर छात्र नेता पचास साल के तो ..... 2013 बी.बी.सी. कॉम 1
2. मानवीय दत्तात्रेय जी हॉसवले एवं माननीय मिलिंद मराठे राष्ट्रीय पुनर्निर्माण 2015, राहूल शर्मा, मुंबई–3
3. प्रशांत सिंह, एक आवाज जो सुनाई देती है, 2017, विकिपीडिया
4. विष्णु दत्त शर्मा स्वाधीन भारत का छात्र आंदोलन 2009, अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् राँची, 12